International Journal of Education and Science Research Review
IJESRR
May-June 2017, Volume-4, Issue-3
E-ISSN 2348-6457
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

भारतीय राजनीति को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन

डॉ हंसा शर्मा

व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय मालपुरा, टोंक, राजस्थान

सार

राजनीति, समाज और संविधान में घनिष्ठ संबंध रहता है। संविधान राजनीति और समाज का आधार होता है। राजनीति समाज के केन्द्र में निर्मित होती है और फिर उसी राजनीति को प्रभावित करती है। समाज का स्वरूप भी राजनीति को आधार प्रदान करता है। समाज में विद्यमान आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक तत्व राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप को बहुत हद तक निर्धारित करते है। संवैधानिक ढाँचे में काम करने वाली भारतीय राजनीति एक संघीय संसदीय लोकतांत्रिक गणतंत्रात्मक पद्धति का अनुसरण करती है। भारत में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक परिवेश में भिन्नता के कारण राजनीति के निर्धारक तत्व जाति, समुदाय व व्यवसाय, दलीय व्यवस्था, दबाव समूह, नेतृत्व इत्यादि तत्व भारतीय राजनीति को प्रभावित करते है। इनके अतिरिक्त विभिन राज्यों में संसदीय संस्थाओं के कार्यकरण, सरकारों की कार्यक्षमता तथा जनता की विकास प्रक्रिया में भागीदारी ने राज्य राजनीति को प्रभावित किया है।

संकेत शब्द : *समाज, नियम, व्यवहार, राज्य ।*

प्रस्तावना

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा किसी समाज या संस्था का अपरिपक्व सदस्य उस समाज के व्यवहार, मूल्य एवं सिद्धान्तों को सीखता है । इस प्रक्रिया के द्वारा वह राजनीतिक व्यवहार, आचार, विचार तथा राजनीतिक व्यवस्था को स्वीकार करता है। यह प्रक्रिया राजनीतिक समाज में बड़े ही निर्वाध गति से अपना कार्य करती है। राजनीतिक सामाजीकरण की प्रक्रिया राजनीति को समझने वाली उस कुंजी की भांति है जिसके द्वारा व्यक्ति उन राजनीतिक तरीकों का ज्ञान प्राप्त करता है, जो उस समाज में प्रचलित रहती है, जिसमें वह रहता है। राजनीतिक सीख, राजनीतिक व्यवहार को धीरे–धीरे प्रभावित करती है यह प्रक्रिया राजनीतिक कार्य के द्वारा बढ़ती ही जाती है। यदि हम अपने आसपास देखें तो हमें आंदोलन, विकास और परिवर्तन दिखेगा। लेकिन अगर हम गहराई से गौर करें, तो हमें यह भी दिखेगा कि निश्चित मूल्य और सिद्धांतों ने जनता को प्रोत्साहित किया और नीतियों को निर्देशित किया है। लोकतंत्र, स्वतंत्रता या समानता ऐसे ही आदर्श सिद्धांत हैं। विभिन्न देश ऐसे मूल्यों को अपने संविधान में प्रतिस्थापित कर उनकी हिफाजत करने का प्रयास करते हैं जैसा कि, अमेरिकी और भारतीय संविधानों में किया गया है। हालाँकि इन संवैधानिक दस्तावेजों की उत्पत्ति रातोंरात नहीं हुई। इनका निर्माण उन विचारों और सिद्धांतों के आधार पर हुआ, जिन पर कौटिल्य और अरस्तू से लेकर जॉन लॉक रूसो, कार्ल मार्क्स, महात्मा गांधी और डॉ. बी. आर. अंबेडकर तक के समय से वाद–विवाद होता आया है। बहुत पहले, ईसा पूर्व पाँचवीं शताब्दी में प्लेटो और अरस्तू ने अपने विद्यार्थियों से विचार–विमर्श किया था कि राजतंत्र और लोकतंत्र में से कौन–सा तंत्र बेहतर है। आधुनिक काल में सबसे पहले रूसो ने सिद्ध किया कि स्वतंत्रता मानव मात्र का मौलिक अधिकार है। कार्ल मार्क्स ने तर्क दिया कि समानता भी उतनी ही निर्णायक होती है, जितनी कि स्वतंत्रता। अपने देश में गांधी जी ने अपनी पुस्तक हिंद–स्वराज में वास्तविक स्वतंत्रता या स्वराज के अर्थ की विवेचना की। अंबेडकर ने जोरदार तरीके से तर्क रखा कि अनुसूचित जातियों को अल्पसंख्यक माना जाना चाहिए और उन्हें विशेष संरक्षण मिलना चाहिए। इन विचारों ने भारतीय संविधान की प्रस्तावना में स्वतंत्रता और समानता को प्रतिष्ठित किया।

राजनीति, संगठित समाज से ही होती है और समाज को राजनीति से अलग नहीं किया जा सकता हैं। भारत में राजनीति और समाज का महत्वपूर्ण सम्बन्ध रहा है। सन् 1947 में भारत के स्वतंत्र होने और 1950 के संविधान के अंतर्गत संसदीय लोकतंत्र की स्थापना से लेकर वर्तमान तक की भारतीय राजनीति को समाज और उसके तत्व प्रभावित करते रहे हैं। भारत का समाज धर्म, जाति, भाषा और प्रादेशिकता के तत्वों से प्रभावित रहा है और राजनीतिक व्यवस्था पर इन तत्वों का दबाव प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों रूपों में दृष्टिगोचर रहा है।

वर्ष 1960 के दशक से भारतीय राजनीति में नए सामाजिक समूहों का प्रवेश हुआ और उन्होंने अपने राजनीतिक संसाधनों के उपयोग से राजनीति को आकार देना प्रारम्भ किया। स्त्रियों एवं पर्यावरणाविदों ने नए राजनीतिक वर्ग का निर्माण किया।

वर्ष 1970 के दशक में सामाजिक कार्यकर्ताओं ने वृहत आधार पर सामाजिक आन्दोलन खड़ा करना आरम्भ किया । यह उनके लिए शक्तिशाली साबित हुए जिनकी उनके दृष्टिकोण से राज्य तथा राजनीतिक दलों द्वारा उपेक्षा की जा रही थी। संभवतः सबसे ताकतवर था – कृषि आन्दोलन एवं दलितोद्धार आन्दोलन। विभिन्न संगठनों की स्त्रियों ने परिचर्चाओं में अपने विचारों का आदान–प्रदान आरम्भ कर दिया। स्त्रियों से जुड़े मुद्दों को परिभाषित एवं प्रोत्साहित करना शुरू कर दिया। इसी तरह पर्यावरण के मुद्दों से जुड़े आन्दोलन प्रारम्भ हुए और जिसने सरकार पर पर्यावरण से जुड़े मुद्दों के प्रति और अधिक जवाबदेह होने के लिए अधिक दबाव बनाना शुरू कर दिया। यह प्रयास भी किया कि विकास का एक ऐसा सिद्धान्त बने जिसमें जनजातीय संस्कृति तथा पर्यावरण की उत्तरजीविता को लेकर और अधिक समानता हो ।

अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक चुनाव, अपेक्षाकृत स्वतंत्र न्यायपालिका, मीडिया एवं जागृत नागरिक समाज के साथ भारत में एक ऐसी परिस्थिति बनी हुई है, जो समस्त विकासशील देशों में सबसे अधिक जनतांत्रिक है। फिर भी भारतीय जनतंत्र दबाव रहित नहीं है। राष्ट्रीय राज्य की केन्द्रीकरण और राष्ट्रीयकरण करने और बहुलवादी समाज के विभेदों को एक जन समाज के समरूप खांचे में ढालने की भूमिका रही है। एक तरह से राष्ट्रीय राज्य ने भू–भागीयता को केन्द्र–राज्य की वैधता का बुनियादी स्रोत बनाया। उसने अपनी अन्दरूनी और बाहरी सीमाओं को परिभाषित किया।

आज भारतीय समाज में राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित है। जहाँ राजनीतिक और प्रशासनिक शक्ति को समाज ने अमलीयजामा पहनाया है, वहीं इन संस्थाओं के साथ–साथ केन्द्र–राज्य ने भी समाज की शक्ति स्वीकारी है । गठबन्धन से मूल्यों की राजनीति के स्थान पर सत्तालोलुपता की राजनीति का सूत्रपात हुआ है। समाज के विखण्डित ढांचे में राजनतिक संस्थाओं, मूल्यों और विचारों का समावेश हुआ है। समाज के विभिन्न वर्गो को राजनीति में स्थान मिला है और उसका लाभ भी मिला है। भारत एक विशाल देश है यहां की राज्यों की राजनीति में एकरूपता का अभाव पाया जाता है। इस एकरूपता के अभाव का कारण यहां की विभिन्न प्रकार की क्षेत्रीय समस्याएं आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में विभिन्नता है। इन सबके साथ ही नेतृत्व, शिक्षा का स्तर, संसाधनों की उपलब्धता, जनता की जागरूकता, भाषावाद, साम्प्रदायिकतावाद तथा यथा स्थितिवाद जैसे परम्परागत तत्वों ने राज्यों की राजनीति को प्रभावित किया है। ये सभी कारण भारत की संरचनात्मक एकरूपता को भी प्रभावित करती है। इन्हीं कारणों से 1947 से लेकर वर्तमान तक भारतीय राज्यों की राजनीतिक गति का स्पष्ट एवं निश्चित दिशा बताना कठिन हुआ है । भारतीय संघीय व्यवस्था के अन्तर्गत राजनीति के तीन स्तर दृष्टिगोचर होते हैं।

1. राष्ट्रीय राजनीति।
2. राज्य राजनीति ।
3. स्थानीय राजनीति ।

इस त्रिस्तरीय राजनीति में राष्ट्रीय राजनीति, आधुनिकतावादी और स्थानीय राजनीति, परम्परावादी और राज्य राजनीति आधुनिकतावादी और परम्परावादी दोनों तत्वों का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार भारत की राजनीति में राज्यों की राजनीति ऐसी महत्वपूर्ण कड़ी है जो गांव, कस्बा, नगर और शहर की राजनीति को राष्ट्रीय राजनीति से जोड़ने का कार्य करती है।

भारतीय संघ के विभिन्न इकाईयों की राजनीति को राज्य राजनीति के रूप में परिभाषित किया गया है। भारत के राज्यों का अध्ययन विशाल राजनीतिक व्यवस्था के अंग के रूप में या स्वतन्त्र रूप से दोनों तरह से किया जा सकता है। जहां तक राज्यों के शासन के सम्बन्ध में संवैधानिक प्रावधानों का सवाल है तो भारतीय संघ के राज्यों के अपने अलग संविधान नहीं है। कुछ विशेष मामलों में विशेष प्रावधानों को छोड़कर संविधान के द्वारा सभी राज्यों को एक जैसी शक्ति प्रदान की गयी है लेकिन यह सच्चाई है कि राज्यों की सामाजिक स्थिति और संगठनिक संरचना भिन्न है । इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि सभी राज्यों की राजनीतिक प्रवृत्तियां एक जैसी हों। भारतीय राज्यों की संवैधानिकता एक ही तरह का होने के बावजूद उनकी पहचान अलग–अलग है। भारतीय संघीय व्यवस्था में राज्यों की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसलिए राज्य राजनीति का अपना विशेष महत्व है। कुछ विद्वानों का मानना है कि लोक कल्याण के सम्बन्ध में राज्यों की सरकारें ही वास्तविक सरकारें होती है। विकास कार्यक्रमों के सन्दर्भ में केन्द्र सरकार की भूमिका प्राथमिक तौर पर होती है। विकास कार्यक्रमों को लागू करने की जिम्मेदारी मुख्यतः राज्य सरकारों की होती है। जनसाधारण की दिन–प्रतिदिन की समस्याओं का समाधान भी राज्य सरकारों द्वारा ही किया जा सकता है। इसी कारण संसद और केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल की अपेक्षा विधानसभा और राज्य मन्त्रिमण्डल में ही जनसाधारण की अधिक रूचि रहती है। वस्तुतः राज्य राष्ट्रीय राजनीति की आधारशिलाएँ हैं ।

राज्य राजनीति की प्रभावशीलता का उदय पं० नेहरू की मृत्यु के बाद हुआ । राज्य राजनीति के आधारिक विद्वान डॉ० इकबाल नारायण का मत है कि पं० नेहरू के जीवनकाल में ही भारत ने राज्य आधारित क्षेत्रीय राजनीति में प्रवेश कर लिया था उनके निधन ने इस प्रक्रिया को तीव्रता प्रदान कर दी। चीन के हाथों पराजय, बिगड़ती हुई आर्थिक स्थिति और स्वयं अपने गिरते हुए स्वास्थ्य ने पं० नेहरू की स्थिति को जिस अनुपात में आघात पहुंचाया था, प्रादेशिक क्षेत्र और राज्यों की

राजनीति उसी अनुपात में शक्तिशाली होते गये। पं० नेहरू ने सन् 1963 में कामराज योजना के माध्यम से केन्द्र और राज्य राजनीति पर पुनः पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करना चाहा था, लेकिन इसमें उन्हें आंशिक सफलता ही मिली। उत्तर प्रदेश में सत्ता परिवर्तन हुआ। जे. डी. सेठी लिखते हैं कि "नेहरू के अन्तिम दिनों में राजसत्ता केन्द्र से राज्यों की ओर उन्मुख हो गयी थी ।

भारत में विकास कार्यों से सम्बन्धित शक्तियाँ राज्यों को ही प्रदान की गयी है। इसलिए यह महसूस किया गया कि आर्थिक विकास के सम्बन्ध में राज्यों की भूमिका महत्वपूर्ण है। केन्द्र की भूमिका इसके बाद हैं। इसके अलावा क्षेत्रवाद की भावना में वृद्धि हुई । विभिन्न राज्यों में उप–क्षेत्रीयवाद, अलगाववाद और साम्प्रदायिक तनाव पैदा हुए जिसके कारण उन राज्यों की राजनीति का अध्ययन करना विद्वानों के लिए चुनौतीपूर्ण विषय बन गया। इन कारणों से राज्यों की राजनीति को गम्भीरता से लिया जाने लगा। सन् 1970 के बाद भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में राज्यों की राजनीति महत्वपूर्ण विषय बन गई। अब जोर–शोर से यह महसूस किया जाने लगा है कि राज्यों की राजनीतिक प्रक्रिया एक ही धारा में नहीं चलती है। इस प्रकार राज्य सरकारों और राजनीतिक प्रक्रिया का व्यवस्थित अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है ताकि राज्य सरकारों के सांगठनिक स्वरूप की जानकारी प्राप्त हो सके।

राज्यों की राजनीतिक प्रक्रिया के सन्दर्भ में कुछ महत्वपूर्ण पहलु चर्चा का विषय रहें है। यथा –

1. संघीय शासन प्रणाली में प्रत्येक राज्य को कम या अधिक स्वायत्तता का अधिकार होता है। राज्य सरकारों को कृषि, ग्रामीण कराधान, शिक्षा आदि के बारे में महत्वपूर्ण शक्तियाँ तो प्राप्त है ही इसके अलावा भी राज्य सरकारें इतनी सक्षम होती है कि विभिन्न मुद्दों पर रियायत और सुविधाएं पाने के लिए केन्द्र सरकार को प्रभावित कर सकती है।
2. राज्य सरकारें परम्परावादी तत्वों का भी प्रतिनिधित्व करती है। जनसाधारण की दिन–प्रतिदिन की समस्याओं का समाधान राज्य सरकार द्वारा ही किया जाता है। इसलिए राज्य सरकारें शक्ति की महत्वपूर्ण स्रोत होती है।
3. राष्ट्रीय विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में राज्य सरकारों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। राष्ट्रीय योजनाओं की सफलता राज्य सरकारों के कार्यों पर निर्भर करती है क्योंकि राज्य सरकारें देश की प्रशासनिक यन्त्रों के बड़े हिस्से पर अपना नियन्त्रण करती है।
4. राज्य स्तर पर राजनीतिक गतिविधियाँ अन्ततः समूची राजनीतिक व्यवस्था की राजनीतिक प्रक्रिया को आकार देती है। राजनीतिक शक्तियों के राजनीतिक ध्रुविकरण की शुरूआत राज्यों से होकर राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचती है।
5. भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का गहराई से परीक्षण करने से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक राज्य के राजनीतिक विकास का अपना स्वरूप और अपना आन्तरिक राजनीतिक संकट होता है। संघ राज्य की एक इकाई और दूसरी इकाई में भेद की स्थिति होना स्वाभाविक है। यह भेद उनकी राजनीतिक और अन्तः प्रक्रिया की प्रवृत्तियों में होता है।

राज्यों की राजनीति को प्रभावित करने वाले कारक

भारत के विभिन्न राज्यों की ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति भिन्न–भिन्न है। राज्यों की राजनीति को प्रभावित करने वाले कारको का वर्णन निम्न प्रकार कर सकते हैं–

1.संवैधानिक तत्व – भारतीय संघीय व्यवस्था के अन्तर्गत केन्द्र को राज्यों की अपेक्षा अधिक शक्तियां प्राप्त है । शक्तिशाली केन्द्र संवैधानिक प्रावधानों के द्वारा राज्यों पर अपना नियन्त्रण बनाये रखता है ।

2.राजनीतिक तत्व – राजनीतिक तत्व के अन्तर्गत अनेक बातें आती हैं–

i. केन्द्रीय नेतृत्व, मुख्यतया प्रधानमंत्री का व्यक्तित्व राज्यों की राजनीतिक प्रक्रिया को बहुत अधिक सीमा तक प्रभावित करता है । यदि केन्द्रीय नेतृत्व शक्तिशाली और प्रधानमंत्री का व्यक्तित्व प्रभावशाली होता है तो राज्यों की राजनीतिक प्रक्रिया शिथिल रहती है।
ii. मुख्यमंत्री का व्यक्तित्व भी राज्यों की राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात पश्चिम बंगाल में डॉ०बी०सी० राय और उत्तर प्रदेश में पं० गोविन्द बल्लभ पंत का व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि वे केन्द्र सरकार के अनुचित हस्तक्षेप के खिलाफ खड़े हो जाते थे ।

iii. केन्द्र एवं राज्यों की दलीय स्थिति ने राज्य – राजनीति को कई प्रकार से प्रभावित किया है। केन्द्र – राज्य एक ही दल की सरकारों में मधुर सम्बन्ध देखे गये हैं, विपरीत दलों की सरकारों में कटु सम्बन्ध रहते हैं । केन्द्र में अल्पमत या गठबन्धन सरकार हो तो ऐसी स्थिति में केन्द्र द्वारा राज्यों को निर्देशन की क्षमता कम हो जाती है। प्रधानमंत्री व मुख्यमंत्री के व्यक्तिगत आपसी सम्बन्ध भी देखे गए हैं।

3.जाति और धर्म– अखिल भारतीय राजनीति की अपेक्षा राज्य स्तर की राजनीतिक प्रक्रिया को जाति और धर्म अधिक प्रभावित करती है। बिहार, केरल, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा और राजस्थान में जाति और धर्म ने विशेष रूप से राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित किया है।

4.आर्थिक तत्व – राज्यों की राजनीतिक प्रक्रिया आर्थिक तत्वों से भी प्रभावित होती है। यदि एक राज्य में प्राकृतिक संसाधनों की बहुलता है, उसका पर्याप्त औद्योगीकरण हो गया है या कृषि सम्पदा के कारण उसके पास पर्याप्त वित्तीय साधन है, तो उस राज्य की राजनीतिक प्रक्रिया के स्वतन्त्र एवं स्वस्थ्य रूप से विकसित होने की आशा की जा सकती है।

5.सांस्कृतिक व सामाजिक तत्व – भारत संघ के कुछ राज्य सांस्कृतिक, सामाजिक दृष्टि से विकसित, लेकिन कुछ अन्य बहुत पिछड़े हुये हैं। पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात, केरल और तमिलनाडु प्रथम श्रेणी में लेकिन बिहार, उड़ीसा, राजस्थान आदि द्वितीय श्रेणी में आते हैं। भाषा, संस्कृति आदि की दृष्टि से जिन राज्यों की स्थिति भारत की राष्ट्रीय स्थिति के कुछ भिन्न है, उनके साथ व्यवहार करते समय केन्द्र को विशेष सावधानी बरतनी होती है ।

6.भौगोलिक तत्व– किसी राज्य की भौगोलिक स्थिति उस राज्य के आर्थिक विकास को और परोक्ष रूप में राज्य राजनीति को प्रभावित करती है । सीमान्त पर स्थित राज्यों में यदि कभी पृथकवादी प्रवृतियों का उदय होता है तो इसका प्रमुख कारण उसकी भौगोलिक स्थिति हो सकती है। नागालैण्ड और मिजोरम आदि राज्यों की प्रवृत्ति को इसी सन्दर्भ में समझा जा सकता है। इसके अतिरिक्त भारतीय संघ के कुछ राज्य क्षेत्र तथा जनसंख्या की दृष्टि से बहुत विशाल तथा विविधताओं से परिपूर्ण है, लेकिन दूसरी ओर कुछ राज्य क्षेत्र तथा जनसंख्या की दृष्टि से छोटे और अपेक्षाकृत कम विविधताओं वाले हैं। ऐसे राज्यों की राजनीति में एक–दूसरे से भेद होना नितान्त आवश्यक है।

निष्कर्ष

समाज के विखण्डित ढांचे में राजनतिक संस्थाओं, मूल्यों और विचारों का समावेश हुआ है। समाज के विभिन्न वर्गो को राजनीति में स्थान मिला है और उसका लाभ भी मिला है। भारत एक विशाल देश है यहां की राज्यों की राजनीति में एकरूपता का अभाव पाया जाता है। इस एकरूपता के अभाव का कारण यहां की विभिन्न प्रकार की क्षेत्रीय समस्याएं आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में विभिन्नता है। इन सबके साथ ही नेतृत्व, शिक्षा का स्तर, संसाधनों की उपलब्धता, जनता की जागरूकता, भाषावाद, साम्प्रदायिकतावाद तथा यथा स्थितिवाद जैसे परम्परागत तत्वों ने राज्यों की राजनीति को प्रभावित किया है। ये सभी कारण भारत की संरचनात्मक एकरूपता को भी प्रभावित करते है।

संदर्भ सूची

[1] सिन्हा, मनोज, समकालीन भारत एक परिचय, ब्लैकस्वान ओरियंट, नई दिल्ली, 2012

[2] दुबे, अभय कुमार, लोकतंत्र के सात अध्याय, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2014

[3] नेगी, एम०एम०, केन्द्र में गठबन्धन सरकारों की राजनीति 2009–2014 यूपीए के विशेष संदर्भ में

[4] कुमार, आशोक, राजनीति विज्ञान, उपकार प्रकाशन, आगरा, 2000

[5] वीर, गौतम, भारत में राज्यों की राजनीति, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2012

[6] अग्रवाल, आर.सी., भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, आधुनिक भारत का संविधान, एस. चांद एण्ड कम्पनी, दिल्ली, 1985

[7] बसु, डी. डी., भारत का संविधान, एक परिचय, वाधवा एण्ड कम्पनी, नागपुर, 2001

. ब्रास, पॉल, दि पॉलिटिक्स ऑफ इण्डिया सिन्स इण्डिपेन्डेन्स, कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज,1990

[8] बक्शी, एस. आर., श्यामा प्रसाद मुखर्जी, फाउन्डर ऑफ जनसंघ, अनमोल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992

[9] चौबे, कमलनयन, डिसेन्ट्रेलाइजेशन एन इंडियन एक्सपीरियन्स, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2007